(१०)

सर्वज्ञत्व

तत्त्वज्ञान की विचारधाराओं में सर्वज्ञत्व और सर्वदर्शित्व का भी एक प्रश्न है। यह प्रश्न भारतीय तत्त्वज्ञान जितना ही पुराना है। इस विषय में निर्ग्रन्थ-परम्परा की इतिहासकाल से कैसी धारणा रही है इस बात को जानने के लिए हमारे पास तीन साधन हैं। एक तो प्राचीन जैन आगम, दूसरा उत्तरकालीन जैन वाङ्मय और तीसरा बौद्ध ग्रन्थ। उत्तरकालीन वाङ्मय में कभी कोई ऐसा पक्षकार नहीं हुआ जो सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व की सम्भवनीयता मानता न हो और जो महावीर आदि तीर्थंकरों में सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व का उपचरित या मात्र श्रद्धाजनित व्यवहार करता हो। आगमों में भी यही वस्तु स्थापित-सी वर्णित है। महावीर आदि अरिहंतों को जैन आगम निःशंकतया सर्वज्ञ-सर्वदर्शी वर्णित करते हैं। और सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व की शक्यता का स्थापन भी करते हैं। इतना ही नहीं बल्कि जैन आगम उत्तरकालीन वाङ्मय की तरह अन्य सम्प्रदाय के नायकों के सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व का विरोध भी करते हैं। उदाहरणार्थ जैन आगमकार महावीर के निजी शिष्य परन्तु उनसे अलग होकर अपनी जमात जमानेवाले जमालि के सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व का परिहास करते हैं। इसी तरह वे महावीर के समकालीन उनके सहसाधक गोशालक के सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व को भी नहीं मानते;[1] जब कि जमालि और गोशालक को उनके अनुयायी जिन, अरिहंत और सर्वज्ञ मानते हैं। बौद्ध ग्रन्थों में भी अन्यतीर्थिक प्रधान पुरुषों के वर्णन में उनके नाम के साथ सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्वसूचक विशेषण अक्सर पाए जाते हैं। केवल ज्ञातपुत्र महावीर के नाम के साथ ही नहीं बल्कि पुरणकस्सप, गोशालक आदि अन्य तीर्थंकरों के नाम के साथ भी सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व सूचक विशेषण उन ग्रन्थों में देखे जाते हैं।[2] इन सब साधनों के आधार से हम विचार करें तो नीचे लिखे परिणाम पर आते हैं—

१—जैसे आज हर एक श्रद्धालु अपने मुख्य गद्दीधर को जगद्गुरु, आचार्य, आदि रूप से बिना माने-मनवाए संतुष्ट नहीं होता अथवा जैसे आधुनिक शिक्षणक्षेत्र में डॉक्टर आदि पदवियों की प्रतिष्ठा है वैसे ही पुराने समय में हर एक सम्प्रदाय अपने मुखिया को सर्वज्ञ-सर्वदर्शी बिना माने-मनवाए संतुष्ट होता न था।

---

१. भगवती ६. ३२; ३७६; ६. ३३; १५.।

२. अंगुत्तर० Vol. IV. P. 429

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२—जहाँ तक सम्भव हो हर एक सम्प्रदायानुयायी अन्य सम्प्रदाय के मुखियों में सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व का निषेध करने की कोशिश करता था।

३—सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व की मान्यता की पुरानी साम्प्रदायिक कसौटी मुख्यतया साम्प्रदायिक श्रद्धा थी।

उपर्युक्त ऐतिहासिक परिणामों से यह तो निर्विवाद सिद्ध है कि खुद महावीर के समय में ही महावीर निर्ग्रन्थ-परंपरा में सर्वज्ञ-सर्वदर्शी माने जाते थे। परन्तु प्रश्न तो यह है कि महावीर के पहले सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व के विषय में निर्ग्रन्थ-परंपरा की क्या स्थिति, क्या मान्यता रही होगी? जैन-आगमों में ऐसा वर्णन है कि अमुक पार्श्वापत्यिक निर्ग्रन्थों ने महावीर का शासन तब स्वीकार किया जब उन्हें महावीर की सर्वज्ञता और सर्वदर्शिता में सन्देह न रहा[1]। इससे स्पष्ट है कि महावीर के पहले भी पार्श्वापत्यिक निर्ग्रन्थ-परंपरा की मनोवृत्ति सर्वज्ञ-सर्वदर्शी को ही तीर्थंकर मानने की थी, जो उत्तरकालीन निर्ग्रन्थ-परंपरा में भी कभी खण्डित नहीं हुई।

सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व का सम्भव है या नहीं इसकी तर्कदृष्टि से परीक्षा करने का कोई उद्देश्य यहाँ नहीं है। यहाँ तो केवल इतना ही बतलाना है कि पुराने ऐतिहासिक युग में उस विषय में साम्प्रदायिकों की खासकर निर्ग्रन्थ-परंपरा की मनोवृत्ति कैसी थी? हजारों वर्षों से चली आनेवाली सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व विषयक श्रद्धा की मनोवृत्ति का अगर किसी ने पूरे बल से सामना किया है तो वह बुद्ध ही हैं।

बुद्ध खुद अपने लिए कभी सर्वज्ञ-सर्वदर्शी होने का दावा करते न थे। और ऐसा दावा कोई उनके लिये करे तो भी उन्हें वह पसंद न था। अन्य सम्प्रदाय के जो अनुयायी अपने-अपने पुरस्कर्ताओं को सर्वज्ञ-सर्वदर्शी मानते थे उनकी उस मान्यता का किसी न किसी तार्किक सरणी से बुद्ध खंडन भी करते थे[2]। बुद्ध के द्वारा किये गए इस प्रतिवाद से भी उस समय की सर्वज्ञत्व-सर्वदर्शित्व विषयक मनोवृत्ति का पता चल जाता है।

[ई० १०४७]

---

१. भगवती ६. ३२. ३७६

२. देखो, पृ० ११४, टि० २। मज्झिम० सु० ६३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org